धर्म विज्ञान में सम्मेद शिखर जी,
तीस चौबीसी, विद्यमान बीस तीर्थङ्कर जिन,
कामदेव जिन-बाहुबली पूजा,
सम्मेद शिखर टोंक अर्घावली, परमागम-स्तुति

रचयिता एवं संकलन

बीसवीं शताब्दी के प्रथम दिगम्बर जैनाचार्य
चारित्र-चक्रवर्ती श्री १०८ शान्तिसागर जी महाराज
के तृतीय पट्टाधीश आचार्य शिरोमणि श्री १०८ धर्मसागर जी महाराज
के परम शिष्य प्रज्ञाश्रमण मुनि श्री अमितसागर जी महाराज

कृति - धर्म विज्ञान में सम्मेद शिखर जी, तीस चौबीसी, विद्यमान बीस तीर्थंकर जिन, कामदेव जिन-बाहुबली पूजा, सम्मेद शिखर टोंक अर्घावली, परमागम-स्तुति।

कृतिकार एवं संकलन - प्रज्ञाश्रमण मुनि अमितसागर

पावन प्रसङ्ग - बीसवीं शताब्दी के प्रथम दिगम्बर जैनाचार्य चारित्र चक्रवर्ती श्रीशान्तिसागर जी महाराज के तृतीय पट्टाधीश आचार्य शिरोमणि श्रीधर्मसागर जी महाराज के पट्ट शिष्य प्रज्ञाश्रमण मुनिश्री अमितसागर जी महाराज के ससंघ सान्निध्य में गोम्मटेश्वर बाहुबली भगवान के सन् २०१८ के महामस्तिकाभिषेक के उपलक्ष्य में प्रकाशित।

[पुस्तक प्राप्ति स्थान]

आलोक जैन, हनुमानगंज C/O श्री दिगम्बर जैन रत्नत्रय मन्दिर, नसिया जी, कोटला रोड, फिरोजाबाद (उ०प्र०) मो०: ०९९९७५४३४१५।

कम्पोजिंग - वर्धमान कम्प्यूटर, फिरोजाबाद (उ०प्र०)

संशोधित संस्करण - द्वितीय, सन् २०१८

प्रतियाँ - ५०००; मूल्य - २० ₹

मुद्रक - महेन्द्रा पब्लिकेशन प्रा०लि०, ई- ४२,४३,४४, सेक्टर ७ नोएडा (उ०प्र०)

धर्म विज्ञान में सम्मेद शिखर जी

श्री १००८ पार्श्वनाथाय नमः.........
ॐ ह्रीँ श्री अनन्तानन्त परम सिद्धेभ्यो नमः.........
श्री सम्मेदाचलाय नमः.........

भूमिका - प्रकृति के कई शाश्वत नियम हैं, जैसे भरत क्षेत्र में सूर्य का पूर्व से निकलना, पश्चिम में डूबना। चन्द्रमा की कलाओं का घटना-बढ़ना आदि, अपने आप गतिमान होते हुये भी शाश्वत हैं। ऐसे ही लोक में स्थित द्रव्य-पदार्थ आदि शाश्वत हैं, लेकिन काल परिवर्तन से उनमें भी परिवर्तन देखा जाता है। जैसे-उत्सर्पिणी काल में भरत एवं ऐरावत क्षेत्र में हर वस्तु का; द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव की अपेक्षा बढ़ना होता है एवं अवसर्पिणी काल की अपेक्षा उन्हीं वस्तुओं के स्वरूप का घटना भी होता है, लेकिन असंख्याता-संख्यात उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी का समय बीत जाने पर एक हुण्डावसर्पिणी काल आता है, जिसमें प्रकृति के

नियम टूटे से प्रतीत होते हैं, क्योंकि इस नियोग में कुछ अनहोनी प्रक्रियायें होती हैं, जैसे-शाश्वत नियम में भरत क्षेत्र में तीर्थंकरों का जन्म अयोध्या नगरी में एवं मोक्ष सम्मेद शिखर जी के उत्तुंग शिखरों से होता है, लेकिन हुण्डाव-सर्पिणी काल दोष से प्रकृति के नियमों में कुछ विचित्रतायें पैदा होती हैं। तीर्थंकरों की जन्म नगरियाँ भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में होना एवं निर्वाण भूमियाँ भी अलग-अलग स्थानों पर होना, तीर्थंकरों की पुत्रियाँ होना, चक्रवर्ती का मान भंग होना, त्रेशठ शलाका पुरुषों की संख्या में पुनरुक्त दोष होना, जैसे-चक्रवर्ती, कामदेव एवं तीर्थंकर पद एक ही व्यक्ति को मिल जाना, तीर्थंकरों के शरीर के पाँच प्रकार के वर्ण हो जाना आदि।

सम्मेद शिखर - यह तो सर्वविदित ही है कि सम्मेद शिखर अनादि काल से तीर्थंकरों तथा उन्हीं के काल में होने वाले मोक्षगामी असंख्याता-संख्यात मुनियों की मोक्ष स्थली रही है और आगे रहेगी। यह नियम केवल ५ भरत, ५ ऐरावत वाले क्षेत्रों में होने वाले मात्र तीर्थंकरों के लिये नहीं है, बल्कि पाँच विदेह क्षेत्रों में मोक्ष जाने वाले सभी तीर्थंकर भी अपने-अपने क्षेत्रों की अयोध्या नगरियों

में जन्म लेते हैं और अपने-अपने क्षेत्रों के सम्मेदशिखर से निर्वाण प्राप्त करते हैं। इससे सिद्ध है कि हमारे भरत क्षेत्र में जिस प्रकार तीर्थंकरों की जन्म नगरी अयोध्या एवं निर्वाण भूमि सम्मेदशिखर जी है। उसी प्रकार १५ कर्मभूमियों के अपने-अपने क्षेत्र की कुल मिलाकर १७० अयोध्या नगरियाँ एवं १७० सम्मेद शिखर पर्वत हैं।

इन पर्वतों को सम्मेदशिखर क्यों कहते हैं ? आप सभी जानते हैं कि सभी तीर्थंकर एवं निर्वाण प्राप्त करने के पहले तेरहवें गुणस्थानवर्ती सभी जीवों का शरीर परम औदारिक हो जाता है। मानतुंगाचार्य ने आदिनाथ भगवान की स्तुति करते हुए कहा है कि —

यैः शान्त-राग-रुचिभिः परमाणुभिस्त्वम्,
निर्मापितास्त्रि-भुवनैक-ललाम-भूत ।
तावन्त एव खलु तेऽप्य-णवः पृथिव्याम्,
यत्ते समान-मपरं न हि रूप-मस्ति ॥

अर्थ - हे जिनेन्द्र ! जिन उत्तमोत्तम सुन्दर परमाणुओं से आपके सुन्दर शरीर की रचना हुई है, मालूम होता है कि वे परमाणु उतने ही थे, क्योंकि उससे अधिक परमाणु होते तो आपके समान दूसरा रूप भी होना चाहिए था, परन्तु आपके समान कोई दूसरा रूप इस पृथ्वी पर है ही नहीं, अतः स्पष्ट है कि वे परमाणु उतने ही थे, भगवान् आप अद्वितीय सुन्दर हैं।

इससे सिद्ध होता है कि तीर्थंकरों को एवं अन्य केवलियों को जब मोक्ष होता है तब उनके परमौदारिक शरीर के नख एवं केशों को छोड़कर बाकी शरीर कपूर की तरह उड़ जाता है। नख एवं केशों का अग्नि संस्कार मोक्ष कल्याणक की क्रिया करते समय अग्निकुमार जाति के देव करते हैं। जिससे वे वही राख बनकर; पत्थर, मिट्टी के रूप में परिवर्तित हो जाती है। इसी मिट्टी के सहारे जब वायु, पक्षी या मनुष्यों के प्रयोग से बीज उगते हैं तो वे वृक्ष का रूप लेते हैं पुनः उन्हीं वृक्षों में से "अनादि सम्बन्धे च" (तत्त्वार्थ सूत्र) की तरह बीज से वृक्ष, वृक्ष से बीज के सम्बन्ध जैसा ही इस भूमि का संस्कार होता जाता है। जैसे कि वृक्ष

सूखा, आग लगी, राख बनी पुनः मिट्टी में परिवर्तन हो गया। जिसमें इस क्षेत्र की मिट्टी में सम्यक् परिवर्तन हो गया, जिससे इस क्षेत्र की सम्यक् मिट्टी की मात्रा में कमी नहीं आती। इस प्रकार से सिद्ध है कि तीर्थंकरों एवं मोक्षगामी पुरुषों के सम्यक् परमौदारिक शरीर के अंशों का पिण्ड हैं ये पर्वत।

ऐसी लोकोक्ति है कि अभव्य जीव ने इतनी बार दिगम्बर मुनि दीक्षा ली कि यदि उसके पिच्छी-कमण्डुल का संग्रह किया जाये तो सुमेरु पर्वत के बराबर ढेर लग जायें। तब परमौदारिक शरीर के नख और केशों की राख से इतना बड़ा पर्वत बन जाये तो कौन-सा आश्चर्य है ? इसलिये यह पर्वत पवित्र है एवं सम् यानि सम्यक् प्रकार की यानि मेद का यानि माटी का या यूँ कहें कि जिस मिट्टी में भी सम्यक्त्वरूपी बीज को उपजाने की शक्ति है, इसलिये इसे सम्मेद शिखर कहते हैं यानि यह वह भूमि है, जिसके दर्शन से सम्यक्त्व की उत्पत्ति होती है। सम्मेद शिखर; क्षेत्र मंगल है, अतः इसको सम्मेद शिखर कहते हैं। जब कभी पर्वतराज पर किसी प्रकार की अशुद्धि होती है तब मेघों की वर्षा से उसकी सफाई भी होती

है। वर्षा के उपरान्त पूरा पर्वत नहाया-सा मालूम पड़ता है। इस पर्वत पर वर्षा अन्य मौसम में भी पन्द्रह दिन से अन्दर एक बार जरूर होती है, यह भी पर्वतराज की शुद्धिकरण का महत्त्वपूर्ण अंग है।

सम्मेदाचल - सम्मेद की व्याख्या ऊपर की जा चुकी है। सम्मेद के साथ अचल शब्द प्रयोग किया है, इसका अर्थ है कि अपने स्थान पर ही है। अनादिकाल से अनन्तकाल रहना, स्थान नहीं बदलना, चाहे प्रलय काल आदि से कितना ही परिवर्तन क्यों न हो, इसी स्थान पर इसकी पुनः रचना होना तब ही इसकी अनादि अनिधनता सिद्ध हो सकती है।

ऐसा माना जाता है कि जब प्रलय काल आता है तब भरत, ऐरावत क्षेत्रों में जो परिवर्तन होता है, जिससे पर्वत आदि की ऊँचाई समाप्त होकर मात्र समतल पटल रह जाते हैं और समस्त चिन्ह समाप्त हो जाते हैं, लेकिन जब पुनः तीर्थंकर जैसे महापुरुषों का जन्म, इन भूमियों में होने को होता है तब इन्द्र कुबेर को आज्ञा देता है कि अयोध्या नगरी का निर्माण करो तब कुबेर उसी अयोध्या

नगरी की भूमि में ही अयोध्या नगरी का निर्माण करता है, क्योंकि भूमि के वज्र पटलों में अयोध्या नगरी एवं सम्मेदशिखर की रचना के लिये प्राकृतिक स्वास्तिक के चिन्ह अनादिकाल से चिन्हित हैं, इन्हीं चिन्हों को केन्द्र बिन्दु मान कर अयोध्या एवं सम्मेदशिखर पर्वत की पुनः रचना होती है।

कुछ आगम की —

जैसे जम्बूद्वीप के विभाग करने वाले पर्वतों का वर्णन तत्त्वार्थ सूत्र में है —

"तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषध-नील-रूक्मि शिखरिणो वर्षधर पर्वताः।

अर्थ - इस सूत्र का तात्पर्य है कि जम्बूद्वीप विभाजन करने वाले हिमवन् आदि जो पर्वत हैं, वे अनादि तो हैं ही, लेकिन पूर्वापरायता अर्थात् पूर्व एवं पश्चिम लम्बे हैं। ठीक उसी प्रकार से सम्मेदाचल भी अनादि कालीन सिद्ध होता है, क्योंकि यह पर्वत भी पूर्व-पश्चिम ही लम्बा है। लोग भजनों के माध्यम से कहते भी हैं,

"पूरब चन्दा प्रभो बसें, अरु पश्चिम पारसनाथ-सखी री चलो शिखर को मेला है" क्योंकि ऐसी मान्यता है सम्मेदशिखर जी के बारे में कि........

भाव सहित वन्दे जो कोई । ताँहि नरक पशु गति नहि होई ।।

यह मात्र मान्यता ही नहीं है। इतिहास के पन्नों में देवपत, खेवपत दो भाईयों का व्यक्तित्व प्रसिद्ध है कि उन्होंने भाव सहित वन्दना में टोकों पर ज्वार के दाने चढ़ाये और वह मोती, रत्न आदि बन गये । यही वह दोनों भव्य जीव थे जिनके पास **'पारस पत्थर'** था । जिन्होंने जगह-जगह यात्रा के रास्ते में भव्य दिगम्बर जिन मन्दिर बनवाये । इनके द्वारा बनवाये गये देवगढ़ के मन्दिर आज भी विश्व प्रसिद्ध हैं। आगम में ऐसा कहा है कि धनिया के बराबर मन्दिर एवं राई बराबर प्रतिमा बनवाने व विराजमान कराने वाला नियम से निकट भविष्य में मुक्ति का पात्र होता है तब दोनों भाइयों द्वारा इतने विशाल-विशाल मन्दिर बनवाने से वे नियम से मुक्ति के पात्र हैं, अतः उनकी नरक और पशु गति का निवारण अवश्य हुआ है।

आगम ग्रन्थों में तीर्थयात्रा का विशेष महत्त्व है तत्त्वार्थसूत्र के टीकाकार सर्वार्थसिद्धि में छटवें अध्याय के सूत्र संख्या २३ की टीका लिखते हुये कहते हैं कि **"धार्मिकदर्शन संभ्रम सद्भाव उपनयन संसरण भीरुता प्रमादवर्जनादिः" तदेतच्छुभ नाम कर्मास्त्रव कारणं वेदितव्यं** अर्थात् धार्मिक पुरुषों व स्थानों के दर्शन करना, आदर सत्कार करना, सद्भाव रखना, उपनयन अर्थात् यज्ञोपवीत संस्कार रखना, संसार से डरना और प्रमाद का त्याग करना आदि; ये सब शुभ नामकर्म के आश्रव के कारण हैं। इससे सिद्ध होता है तीर्थयात्रा आदि करने से शुभ नामकर्म का आस्त्रव होता है, जिससे अशुभ दुर्गति टल जाती है।

चरण चिन्ह - आज हम जब शिखर जी की टोकों पर वन्दना करने जाते हैं तब मन में कई प्रश्न उठते हैं। सबसे पहला यह कि क्या पता यहीं से तीर्थंकर मोक्ष गये या अन्य स्थान से ? क्योंकि पहले तीर्थंकरों के शरीर की ऊँचाई ५०० धनुष तक हुआ करती थी । इतना बड़ा शरीर; इतना छोटा स्थान ! हम पहले चर्चा कर आये हैं कि मोक्षगामी के मात्र नख एवं केश मात्र शेष रह जाते हैं, जिनको

अग्निकुमार देव अपने मुकुट की अग्नि से उन्हें संस्कारित करते हैं। अब आप सोचिये कि कितना ही बड़ा शरीर हो नख, केश थोड़े स्थान में समा जाते हैं और जल कर राख हो जाते हैं।

उस स्थान को इन्द्र; वज्र के द्वारा चिन्हित करता है। इस बात का प्रमाण-आचार्य श्री समन्तभद्रस्वामी ने बाइसवें नेमिनाथ भगवान की स्तुति में बताया है कि इन्द्र ने ऊर्जयन्त गिरि पर जहाँ से नेमिनाथ प्रभु ने मोक्ष प्राप्त किया था, वहाँ पर वज्र से चिन्ह बनाया था।

ककुदं भुवः खचरयोषि-दुषित-शिखरै-रलङ्कृतः ।
मेघ-पटल-परिवीत-तट-स्तव लक्षणानि लिखितानि वज्रिणा ॥

इससे सिद्ध है कि इसी प्रकार अन्य २३ तीर्थंकरों के निर्वाण स्थल पर भी इन्द्र; वज्र से चिन्ह बनाता है, उन्हीं स्थानों पर टोकों का निर्माण हुआ है और उसी स्थान पर चरण चिन्ह हैं।

वन्दनीय चरण चिन्ह - जिस प्रकार हाथ के अँगूठे की छाप प्रमाणिक मानी जाती है, उसी प्रकार उन तीर्थंकरों के चरण चिन्हों अर्थात् चरणों के नीचे के भूतल के छाप से अभिप्राय है। दिगम्बर जैनधर्म में चरण चिन्ह पूज्यनीय हैं अतः दिगम्बर चरण हमेशा पगतल की ओर से उत्कीर्ण होते हैं, क्योंकि सीधे चरण मूर्ति के अंग माने जायेंगे जो कि पूज्य नहीं हैं, क्योंकि किसी भी मूर्ति का अंग भंग-यानि खण्डित सिर-हाथ आदि पूज्यनीय नहीं है। जैनधर्म के अनुसार मूर्ति के खण्डित सिर-हाथ आदि पूज्यनीय नहीं हैं तब सीधे चरणों को शरीर का खण्डित अंग ही माना जायेगा, इस बात को आप स्वयं सोचें ?

एक टोंक से इतने मुनि मोक्ष कैसे गये ? - जब हम पहली टोंक श्री कुन्थुनाथ; ज्ञानधर कूट की वन्दना करते हैं और कहते हैं कि इस टोंक से ९६ कोड़ा-कोड़ी, ९६ करोड़, ३२ लाख, ९६ हजार, ७४२ मुनि मोक्ष गये; उनके चरणारविन्द में मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। तब एक प्रश्न उठता है कि इतने छोटे से स्थान से एक साथ

इतने मुनि मोक्ष कैसे जा सकते हैं ?

सिद्ध दो प्रकार के होते हैं, तीर्थसिद्ध एवं इतर सिद्ध अर्थात् जो उन तीर्थंकर के रहते मोक्ष जाते हैं वे तीर्थ सिद्ध एवं जो उन तीर्थंकर के आगे-पीछे भी मोक्ष जाते हैं, वे इतर सिद्ध कहलाते हैं। सुनो ! कुन्थुनाथ भगवान के तीर्थकाल में इतने मुनि मोक्ष गये। छः महीने आठ समय में छः सौ आठ मुनि मोक्ष जाते हैं, अतः इससे सिद्ध है कि एक टोंक से इतने कोड़ा- कोड़ी मुनि मोक्ष गये।

एक कोड़ा-कोड़ी का प्रमाण -

८४ लाख (लक्ष) वर्ष = एक पूर्वांग, ८४ लाख पूर्वांग = एक पूर्व, संख्यात पूर्व = एक पल्य, १० कोड़ा-कोड़ी पल्य = एक सागर प्रमाण संख्या है, एक कोड़ा-कोड़ी=दस नील (१००००००००००००००)

एक पल्य का प्रमाण - एक योजन ४ कोस व्यास वाले, योजन गहरे गड्डे का घनफल - १ × १ × १०, = × १० = १९/६ × १/४ = क्षेत्रफल १९/२४×१ =

१९/२४ घनफल का एक गड्डा। इस गड्डे के रोमों की संख्या —

४१३४५२६३०३०८५०३१७७७४९५१२१९२०००००००००००००००००

एक टोंक की वन्दना का फल - घर में स्नानादि के समय या जब से जिनेन्द्र देव के दर्शन की भावना प्रारम्भ होती है तभी से उस देव-दर्शन का फल एवं महत्त्व प्रारम्भ हो जाता है, ऐसा हमारे पूर्व आचार्य कहते हैं कि —

जब चिन्तों तब सहस्त्र फल, लक्खा फल गमणेय।
कोड़ा-कोड़ी अनन्त फल, जब जिनवर दिट्ठेय ॥

अर्थात् जब हमें भगवान के दर्शन करने का विचार संकल्प मन में आता है कि अरे! अभी हमें मन्दिर जी जाना है, भगवान के दर्शन करना है, ऐसा चिन्तन आते ही हजार गुणाफल प्रारम्भ हो जाता है। जब आप सामग्री आदि लेकर भक्ति, स्तुति आदि पढ़ते हुए मन्दिर की ओर ईर्यापथ पूर्वक चल देते हैं तब आपको लाख गुणा फल होता है, लेकिन जब आप मन्दिर जी में पहुँच कर

साक्षात् जिनमूर्ति के दर्शन करते हैं तब अवश्य ही अनन्त कोड़-कोड़ी फल होता है। आपने पढ़ा होगा, सुना होगा कि श्री सम्मेदशिखर जी की प्रत्येक टोंक की वन्दना करने से इतने-इतने करोड़ उपवासों का फल मिलता है। इतना ही नहीं, तत्त्वार्थ सूत्र के रचयिता उमास्वामी आचार्य जी ने भी अन्तिम प्रशस्ति में लिखा है कि —

दशाध्याये परिच्छिन्ने तत्त्वार्थे पठिते सति।
फलं स्या-दुपवासस्य भाषितं मुनि पुंगवैः॥

अर्थात् तत्त्वार्थ सूत्र के दस अध्यायों का पाठ करने से एक उपवास का फल मिलता है, ऐसा मुनि श्रेष्ठों ने कहा है।

आज के आधुनिक भौतिक युग में इस प्रकार के फल की चर्चा जब की जाती है तो कुछ लोग इसे प्रलोभन मानते हैं कि इस फल के लोभ से व्यक्ति मन्दिर आना, तीर्थयात्रा करना, सूत्रादि का पाठ करना आदि सीखें, परन्तु ऐसा

नहीं कि मात्र प्रलोभन हो, दिखावा हो और फल कुछ नहीं मिले ।

हमारे पूर्वाचार्यों की दृष्टि बड़ी ही वैज्ञानिक-मनोवैज्ञानिक थी, उन्होंने एक विशुद्ध गणित निकाला । जैसे पाँच किलो जल को एक किलो शक्कर से यथार्थ मीठा किया जा सकता है तथा उतने ही जल को दो चम्मच सेकरीन डालकर मीठा किया जा सकता है। मिठास दोनों में बराबर है, लेकिन कहाँ एक किलो शक्कर और कहाँ दो चम्मच सेकरीन ? ठीक उसी प्रकार से इतने करोड़ दिन के उपवास करके, व्यक्ति अपने जितने कर्मों की निर्जरा, परिणामों की विशुद्धि करता है, उतनी विशुद्धि एवं कर्मों की निर्जरा से एक दिन के मन्दिर जाने, शिखर जी की एक टोंक की वन्दना करने एवं एक दिन के तत्त्वार्थ सूत्र के पाठ करने से हो सकती है, होती है। यदि भावात्मक तरीके से इन सब कार्यों को किया जाये तो इसके फल के बारे में कभी हमें शंका नहीं होना चाहिये ।

पूज्यपादाचार्य ने धार्मिक दर्शन अर्थात् धर्मक्षेत्र-तीर्थयात्रा पञ्चकल्याण भूमियाँ एवं गुरु आदि के दर्शन को शुभ नामकर्म के आस्रव का कारण माना है।

टोंक-कूट - प्रत्येक चरणों के स्थान को टोंक या कूट करते हैं। जिसका अर्थ स्थान है, लेकिन इन टोंको के नाम भिन्न-भिन्न हैं। श्री सम्मेदशिखर माहात्म्य ग्रन्थ में इसका वर्णन विशेष रूप से आया है। लोहाचार्य ने लिखा है कि उन-उन तीर्थंकरों के समयों में जिन-जिन राजा महाराजाओं ने श्री सम्मेदशिखर जी की यात्रा बड़े वैभव एवं विभूति के साथ की थी तथा उनके चरणों के स्थान पर जो सुन्दर-सुन्दर छत्रियाँ बनवाई थीं, उन्हीं राजा-महाराजाओं के नाम से उन टोंको-कूटों के नाम रखे गये। कालान्तर उनकी प्रसिद्धि होने से उन्हीं के रखें नाम आज तक चले आ रहे हैं। भले ही उनके द्वारा बनवाई गईं छत्रियाँ टूट-फूट कर विलीन हो गई हैं और उनके स्थान पर दिगम्बर भट्टारक शान्तिसागर जी के उपदेश से बनाई गईं चरण छत्रियाँ अभी वहाँ मौजूद हैं, जिनके दर्शन हमने प्रत्यक्षतः सन् १९९७-९८ एवं ९९; इन तीन वर्षों में निरन्तर किये हैं। जिनके द्वारा जीर्णोद्धार के शिलापट भी लगे हैं।

चौपड़ा कुण्डा दिगम्बर जैन समाज के एक ऐतिहासिक मनोहर धरोहर - समस्त सरकारी एवं सामाजिक वाद-विवादों से परे श्री दिगम्बर जैन सम्मेदाचल विकास समिति द्वारा निर्मापित सम्मेदशिखर जी के उत्तुंग शिखर, चौपड़ा कुण्ड पर श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर एवं धर्मशाला है। जो बीसवीं शताब्दी का एक पुष्ट प्रामाणिक जीता जागता दिगम्बर जैन धर्म का स्वर्णिम दस्तावेज है।

इस चौपड़ा कुण्ड के निर्माण करने में समस्त दिगम्बर जैनाचार्य एवं सर्व मुनियों का मंगलाशीष एवं दानी महानुभावों के धन का पूर्णतः सदुपयोग हुआ है, ऐसा अन्यत्र करने से नहीं होता, क्योंकि श्वेताम्बर सम्प्रदाय की जो रात्रि में ठहरने एवं भोजन-नास्ता आदि की व्यवस्था उनके मानने वालों ने जल मन्दिर में की है, ऐसी व्यवस्था दिगम्बर-श्वेताम्बर विवाद के कारण दिगम्बर मतावलम्बियों को पर्वत पर कहीं नहीं थी, जिससे दिगम्बर मतावलम्बी साधु एवं श्रावकों को कई बार श्वेताम्बरियों के द्वारा अपमान-तिरस्कार एवं उपेक्षा का शिकार होना पड़ता

था। आज स्वतन्त्र रूप से जो संघर्ष एवं साहस के साथ चौपड़ा कुण्ड का स्थान निर्माण हुआ है। वह अब दिगम्बर जैन समाज की शान-गौरव, मान-मर्यादा का रक्षक है। जो समस्त दिगम्बर जैन साधु एवं श्रावकों की विशेष आस्था का केन्द्र बन गया है। वात्सल्य रत्नाकर आचार्य श्री विमलसागर जी, तीर्थरक्षा शिरोमणि आचार्य श्री आर्यनन्दी जी महाराज का विशेष योगदान इस स्थान के विकास में रहा है। इस कार्य के संस्थापक महामंत्री राजेन्द्र कुमार दोषी मधुवन, भागचन्द पाटनी कलकत्ता, हीराचन्द कासलीवाल औरंगाबाद (महा०) एवं अन्य श्रद्धालु पदाधिकारीगणों के तन-मन-धन के व साहस सहयोग से इसका निर्माण हुआ है, जिसका भविष्य समस्त दिगम्बर जैन समाज के लिये अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा ऐसी हमारी मंगलकामना है।

सम्मेदशिखर जी की वर्तमान ऊँचाई - सम्मेद शैल; समुद्र की सतह से ४२-सौ वर्ग फीट ऊँचाई पर है। वह लम्बा फैला हुआ है। उसका क्षेत्रफल २५ वर्ग मील है। पर्वत की चढ़ाई का मार्ग ६ मील के लगभग टोंकों की वन्दना का

क्षेत्र है। इस प्रकार पर्वत की वन्दना करने में १८ मील चलना पड़ता है। यह पर्वत हजारी बाग जिले के पूर्वी किनारे पर ग्रेण्ड ट्रंक रोड और ग्रेण्ड कार्ड लाइन के दक्षिण की ओर है। पश्चिम और उत्तर की ओर यह पर्वत अधिक फैला हुआ है। यह अब गिरिडीह जिले में है।

गिरिडीह नामक स्थान से शिखर जी पहाड़ की तलहटी का स्थान मधुवन लगभग १६ मील की दूरी पर पक्की सड़क पर है। लगभग ८ मील दूरी पर बराकर नदी बहती है। वहाँ पालगंज लघुराज्य के अधिपति का निवास स्थल था। ईसरी नामक रेलवे से मधुवन १४ मील पर है। आजकल ईसरी रेलवे स्टेशन का नाम रेलवे ने ''पारसनाथ'' कर दिया है।

मधुवन में सबसे ऊपर की कोठी बीसपन्थी उपरैली कोठी कही जाती है। निचली कोठी तेरह पन्थियों की है। मध्यवर्ती कोठी श्वेताम्बरों की है। प्रत्येक कोठी में विशाल धर्मशालायें हैं। पर्वत की चढ़ाई उपरैली कोठी से प्रारम्भ होती है। कुछ दूर जाने पर सड़क खत्म हो जाती है और टेढ़ा पगडण्डी का रास्ता मिलता

है। आधी दूर चढ़ने पर जहाँ चढ़ाई कम ढालू रह जाती है। वहाँ चन्दन के बगीचे में से होकर सड़क जाती है। अब चन्दन का बगीचा नष्ट हो गया है। यहाँ एक सुन्दर जल से पूर्ण झरना कलकल नाद करना हुआ गंधर्व नाला जीवन को क्षणिक कहता हुआ यात्री को धर्म के काम में प्रवृत्ति होने से प्रेरणा प्रदाता प्रतीत होता है। वहाँ एक बीस पन्थी कोठी की धर्मशाला है।

यात्री कुछ क्षण इस झरने के पास रुक कर पुनः पर्वत की ओर बढ़ते हैं। एक मील ऊपर जाने पर सीता नाला प्राप्त होता है। वहाँ पर एक धर्मशाला के खण्डहर पाये जाते हैं। आगे सड़क दो भागों में विभक्त हो जाती है। एक डाक बंगले को होती हुई पार्श्वनाथ मन्दिर (टोंक) को चली जाती है और दूसरी कुन्थुनाथ तीर्थंकर की टोंक को जाती है, लेकिन प्रायः यात्री लोग कुन्थुनाथ स्वामी की टोंक के रास्ते से चढ़ते हैं।

मधुवन से डाक बंगला साढ़े पाँच मील की दूरी पर है। वहाँ से पार्श्वनाथ भगवान की टोंक समीप पड़ती है। कुन्थुनाथ भगवान की टोंक वहाँ से ढाई मील

के लगभग है। पार्श्वनाथ की टोंक समीप पहुँचने को मोटर-गाडियों का रास्ता अब बन गया है।

पर्वत यात्रा - पर्वत पर जाने के लिये यात्री लोग रात्रि में लगभग ३-४ बजे रवाना हो जाते हैं और सूर्योदय की बेला में चौपड़ा कुण्ड के दिगम्बर मन्दिर के दर्शन करते हुए भगवान कुन्थुनाथ स्वामी की टोंक पर पहुँच जाते हैं। कुन्थुनाथ स्वामी की टोंक के पास गौतम स्वामी की टोंक बनी हुई है। टोंक पर्वत की चोटियों तथा पर्वत की समीपवर्ती भूमि पर बनी हुई है। यात्री; पर्वत के दूसरे सिरे पर विद्यमान चन्द्रप्रभु भगवान को टोंक की ओर जाता है। इस तरफ की चढ़ाई यात्री को कुछ कठिन-सी लगती है, किन्तु जिन भगवान का पुण्यनाम; श्रान्त (थकी) शरीर में स्थित आत्मा को प्रेरणा और बल प्रदान करता जाता है, उस समय आत्मा की शक्ति और तीर्थंकर भक्ति का संगम, साहस तथा धैर्य प्रदान करते हैं।

चन्द्रप्रभु स्वामी की टोंक से लौटते हुए मध्य में जल मन्दिर नाम का

स्थान मिलता है। वहाँ से पार्श्वनाथ भगवान की टोंक पर पहुँचने में सुविधा रहती है। सन् १९०८ के सरकारी सर्वे सेटिलमेन्ट की रिपोर्ट में पार्श्वनाथ भगवान के स्वर्ण भद्रकूट मन्दिर में दिगम्बर जैन पार्श्वनाथ भगवान की खड्गासन मूर्ति थी। ऐसी सरकारी रिपोर्ट से जानकारी है। सन् १९१२ के सर्वे सेटिलमेन्ट के पूर्व जल मन्दिर में दिगम्बर प्रतिमायें थीं, किन्तु किन्हीं विपक्षियों ने शिखर जी के मुकदमे के समय रातोंरात सब मूर्तियों को गायब कर दिया । आचार्य महावीर कीर्ति महाराज कहते थे कि जल मन्दिर में ७४ दिगम्बर जैन प्रतिमायें थीं, ऐसा लेख नागौर (राजस्थान) शास्त्र भण्डार के ग्रन्थ में उन्होंने देखा था। उनमें से कुछ दिगम्बर प्रतिमायें; श्वेताम्बर कोठी के आँगन में खुदाई के समय सन् २००० में लगभग २० मूर्तियाँ निकल गई, लेकिन कुछ विवाद के कारण श्वेताम्बर कोठी के कमरे में ताला डालकर रख दी गई थीं। बाद में दिगम्बर जैन समाज ने एकता का परिचय देकर उन्हें लेने के लिये प्रयत्न किया और उनमें से आधी मूर्तियाँ दिगम्बर जैन समाज को मिल गईं।

हम उक्त मुकदमे की चर्चा विस्तार में करके पुरानी बातों को पुनः हरा नहीं करना चाहते । इस जल मन्दिर में श्रान्त (थका) यात्री कुछ ठहरकर पुनः पार्श्वनाथ टोंक तरफ चलता है। (साभार-निर्माण भूमि सम्मेदशिखर जी-पं० सुमेर चन्द्र दिवाकर)

मधुवन-पर्वतराज तलहटी में बसा मधुवन ग्राम जहाँ से यात्री अपनी यात्रा प्रारम्भ करते हैं। वर्तमान में लगभग बीसपन्थी तथा तेरहपन्थी कोठी आदि सब मिलाकर करीब पन्द्रह भव्य दिगम्बर जैन जिनालय हैं, जिनमें अनेकानेक वेदियाँ शिखर बन्द होने से मधुवन का मान बढ़ता ही जा रहा है। इनमें मध्यलोक की रचना जो गणिनी आर्यिका सुपार्श्वमती माता जी की प्रेरणा से हुई तथा तीस चौबीसी जिनालय मधुवन की शान है। यात्रियों की सुविधा के लिये हर मन्दिर में सैंकड़ों कमरे बने हुये हैं। वर्तमान में यात्रियों के लिये द्रुतगामी साधन मिलने से यात्रियों की संख्या बढ़ती ही जा रही है। आज भारत के किसी भी कोने से व्यक्ति अधिक से अधिक ३-४ दिन के समय में सम्मेदशिखर जी के दर्शन कर सकता

है, यहाँ के निकटवर्ती रेलवे स्टेशन पारसनाथ तथा गिरिडीह नाम से जानते हैं। जहाँ से यात्रियों को सुविधा होती है, चला आता है।

यात्रियों की संख्या बढ़ने का कारण; कम समय में सुविधापूर्ण यात्रा आज का अर्थयुगीन व्यक्ति करना चाहता है, जिससे व्यापारिक, शारीरिक आदि हानि नहीं हो । अन्य स्थानों में घूमने-फिरने की अपेक्षा धर्म स्थान पर रहने, खाने आदि की सुविधा मिलने से भी यात्रियों का आकर्षण धर्म तीर्थों के प्रति हुआ है, जिसमें दो उद्देश्य की महक आती है-पहला; घूमना फिरना (पिकनिक) दूसरा; धर्मलाभाकांक्षा ।

कई लोग ऐसा भी प्रश्न करते हैं कि सम्मेदशिखर जी इतना प्राचीन तीर्थ क्षेत्र है, लेकिन पुरातत्त्व की दृष्टि से पर्वतराज के आस-पास कोई हजार-दो हजार वर्ष प्राचीन प्रतिमायें या मन्दिरों के अवशेष चिन्ह क्यों दिखाई नहीं देते ? इन सबका मनोवैज्ञानिक कारण समझ में आता है कि हमारे पूर्वजों ने पर्वतराज पर बनें चरण चिन्हों एवं दिगम्बर मूतियों के महत्त्व को बनाये रखने के लिये नीचे

कहीं भी पर्वतराज की तलहटी में मन्दिर नहीं बनवाये, (पर्वतराज पर दिगम्बर जैन मूर्तियों होने का प्रमाण का उल्लेख पहले इसी लेख में कर आये हैं।) लेकिन ३०० वर्ष के इतिहास में नीचे मधुबन में दिगम्बर जैन मन्दिर का निर्माण शुरू हुआ, जो आज तक बढ़ रहा है और आगे भी बढ़ने की पूरी-पूरी सम्भावना है। इसका भी एक कारण यह है कि जिस व्यक्ति की भावना में पर्वतराज की ऊँचाई देख सुनकर घबराहट होना और यह घबराहट व्यक्ति की आस्था की कमी का प्रतीक है, अतः जो अशक्य या वृद्ध; पर्वतराज की ऊँचाई नहीं चढ़ पाते वे मधुबन के मन्दिरों के दर्शन करके ही अपने आपको भाग्यशाली, पुण्यशाली समझते हैं, अतः इस तीर्थक्षेत्र सम्मेदशिखर जी की प्राचीनता में भी शंका नहीं करना चाहिये।

श्री सम्मेदशिखर जी में प्रतिष्ठापित
श्री तीस चौबीसी, विद्यमान बीस तीर्थंकर,
चौबीस कामदेव जिन पूजन

स्थापना

तीर्थराज सम्मेदशिखर जी, तीस चौबीसी यहाँ बनी ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, कामदेव संग यहाँ लसी ।।
विमलसिन्धु जी बने प्रणेता, भरतसिन्धु का दिग्दर्शन ।
आओ भव्यों दर्शन कर लो, एक बार इनका पूजन ।।

ॐ ह्रीँ श्री पञ्चमेरु सम्बन्धी भरतैरावतक्षेत्रस्थ भूत-भविष्यत-वर्तमान कालीन सप्तशत विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान विंशति तीर्थङ्कर

जिन समूह, भरतक्षेत्रस्थ वर्तमान चतुर्विंशति कामदेव जिन समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीँ श्री पञ्चमेरु सम्बन्धी भरतैरावतक्षेत्रस्थ भूत-भविष्यत वर्तमान कालीन सप्तशत विंशति तीथङ्कर जिन समूह, विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान विंशति तीथङ्कर जिन समूह, भरतक्षेत्रस्थ वर्तमान चतुर्विंशति कामदेव जिन समूह! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीँ श्री पञ्चमेरु भरतैरावतक्षेत्रस्थ भूत-भविष्यत-वर्तमान कालीन सप्तशत विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, भरतक्षेत्रस्थ वर्तमान चतुर्विंशति कामदेव जिन समूह! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

सीता नाला का जल शीतल, भव्यों को बतलाता है।
तन-मन अपना शीतल कर लो, यह सन्देश सुनाता है॥

सीता नाला से जल लाकर, जो भी जहाँ चढ़ायेगा ।
निश्चित ही वह जन्म-जरा के, दुःखों से बच जायेगा ॥

ॐ ह्रीँ श्री पञ्चमेरु सम्बन्धी भरतैरावतक्षेत्रस्थ भूत-भविष्यत-वर्तमान कालीन सप्तशत विंशति तीर्थंकर जिन समूह, विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, भरतक्षेत्रस्थ वर्तमान चतुर्विंशति कामदेव जिनेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दनवन-नन्दनवन-मधुवन, शीतल पवन बहाता है ।
पुण्य सुगन्धी पाओ भव्यों, आकर खबर सुनाता है ॥
चन्दनवन से चन्दन लाकर, जो भी यहाँ चढ़ायेगा ।
भव-आताप मिटेगी उसकी, परम शान्ति को पायेगा ॥

ॐ ह्रीँ श्री पञ्चमेरु सम्बन्धी भरतैरावतक्षेत्रस्थ भूत-भविष्यत-वर्तमान कालीन सप्तशत विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान विंशति तीर्थंकर जिन समूह, भरतक्षेत्रस्थ वर्तमान चतुर्विंशति कामदेव जिनेभ्यो भव आताप विनाशनाय

चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थराज के चहुँ ओर, शाली के खेत हैं लहराते।
आकर तुम भी हमें चढ़ा दो, यह संकेत हैं बतलाते॥
अक्षत हैं अक्षय निधि दाता, पुंज चढ़ाओ थाली भर।
हुए अनन्तों सिद्ध यहाँ पर, ऐसी सबको मिली खबर॥

ॐ ह्रीं श्री पञ्चमेरु सम्बन्धी भरतैरावतक्षेत्रस्थ भूत-भविष्यत-वर्तमान कालीन सप्तशत विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, भरतक्षेत्रस्थ वर्तमान चतुर्विंशति कामदेव जिनेभ्यो अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मधुवन के हर मन्दिर में हैं, फूल-फूल सुन्दर क्यारी।
चुन-चुनकर तुम यहाँ चढ़ाओ, श्रीजिन की महिमा न्यारी॥
कामदेव होकर भी जिनने, कामदेव को मारा है।
तीन लोक में श्रेष्ठ जिनेश्वर, भव्यों को ही प्यारा है॥

ॐ ह्रीँ श्री पञ्चमेरु सम्बन्धी भरतैरावतक्षेत्रस्थ भूत-भविष्यत-वर्तमान कालीन सप्तशत विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, भरतक्षेत्रस्थ वर्तमान चतुर्विंशति कामदेव जिनेभ्यो कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नानाविध पकवान मनोहर, सरस-सरस-रस षट् भीने।
रसगुल्ला अरु बरफी पेड़ा, पपड़ी संग खाजे कीने॥
इन्हें बनाओ, इन्हें चढ़ाओ, क्षुधा नशाओ सब अपनी।
यह कहती है जिनवर पूजन, पाओ तुम सब निधि अपनी॥

ॐ ह्रीँ श्री पञ्चमेरु सम्बन्धी भरतैरावतक्षेत्रस्थ भूत-भविष्यत-वर्तमान कालीन सप्तशत विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, भरतेक्षेत्रस्थ वर्तमान चतुर्विंशति कामदेव जिनेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक जगमग-जगमग चमकें, जैसे नभ में तारागन ।
इतने दीप जलाओ भव्यों, तीस चौबीसी के आँगन ।।
लौकिक तम तो मिट जायेगा, इनको यहाँ जलाने से ।
मोह-तिमिर भी मिट जायेगा, साथ भावना भाने से ।।

ॐ ह्रीं श्री पञ्चमेरु सम्बन्धी भरतैरावतक्षेत्रस्थ भूत-भविष्यत-वर्तमान कालीन सप्तशत विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, भरतेक्षेत्रस्थ वर्तमान चतुर्विंशति कामदेव जिनेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

मधुवन-वन की जड़ी बूटियाँ, अगर-तगर के संग लेकर ।
धूप बनाओ ताजी इनकी, फिर धूपायन में खेकर ।।
अष्ट कर्म का नाश करो, यह भूमि हमें बताती है ।
इसीलिये यह धूप प्रभो ! को, जनता यहाँ चढ़ाती है ।।

ॐ ह्रीँ श्री पञ्चमेरु सम्बन्धी भरतैरावतक्षेत्रस्थ भूत-भविष्यत-वर्तमान कालीन सप्तशत विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, भरतक्षेत्रस्थ वर्तमान चतुर्विंशति कामदेव जिनेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आमों के वन लगे यहाँ पर, श्री फल के संग पुंगी फल।
कटहल-नीबू-सेव-सन्तरा, दाड़िम के संग केला फल॥
कीमत देकर इन्हें चढ़ाओ, वेशकीमती पाओ फल।
सिद्धभूमि है पूरी भूमि, पाया सबने फल का फल॥

ॐ ह्रीँ श्री पञ्चमेरु सम्बन्धी भरतैरावतक्षेत्रस्थ भूत-भविष्यत-वर्तमान कालीन सप्तशत विंशति तीर्थंकर जिन समूह, विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान विंशति तीर्थंकर जिन समूह, भरतक्षेत्रस्थ वर्तमान चतुर्विंशति कामदेव जिनेभ्यो मोक्षफल-प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन है अक्षत प्यारे, पुष्प चरु ले दीपक अंग ।
धूप मिलाओ फल ले करके, अर्घ्य चढ़ाओ सबके संग ।।
विमल सिन्धु की दिव्यदेशना से, यह निर्मित कलाकृति ।
भरत सिन्धु का संरक्षण है, भारत की यह ''अमित'' निधि ।।

ॐ ह्रीँ श्री पञ्चमेरु सम्बन्धी भरतैरावतक्षेत्रस्थ भूत-भविष्यत-वर्तमान कालीन सप्तशत विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान विंशति तीर्थङ्कर जिन समूह, भरतक्षेत्रस्थ वर्तमान चतुर्विंशति कामदेव जिनेभ्यो अनर्घ्यपद-प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रज्ञासागर मुनि

जयमाला

सोरठा

चौबीसों जिनराज, भरतैरावत क्षेत्र के ।
भूत भावि जिनराज, वर्तमान को मेल के ॥
पञ्चमेरु के पाँच, भरतैरावत क्षेत्र हैं ।
क्षेत्र विदेह विशाल, विद्यमान जिन को नमूँ ॥
कामदेव तन रूप, सुन्दर हैं तिहुँलोक में ।
इन सबकी जयमाल, पढ़ो सुनों भवि ध्यान से ॥

नरेन्द्र (जोगीरासा)

जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरु दक्षिण दिशि पहचानों ।
भरत क्षेत्र के भूत-भविष्यत-वर्तमान में मानों ॥

''श्री निर्वाण'' **आदि से लेकर** ''शाान्ता'' **जिन तक जानों ।**
ये हैं भूतकाल के जिनवर श्री चौबीसों मानों ।।१।।

भाविकाल के आदि जिन हैं, ''महापद्म'' **पहचानों ।**
अन्तिम जिन हैं, ''अनन्त वीर्य जी'' **श्री जिनदेव बखानों ।।**
वर्तमान ''वृषभादिक'' **लेकर** ''वर्द्धमान'' **तक गुण गाऊँ ।**
श्री सम्मेदशिखर जी से मैं मोक्षपुरी पा जाऊँ ।।२।।

जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरु उत्तरदिशि पहिचानों ।
ऐरावत के भूत-भविष्यत-वर्तमान में मानों ।
''पञ्चरूप'' **श्री आदि लेकर** ''वीर प्रभो'' **तक जानों ।**
ये हैं भूतकाल के जिनवर श्री चौबीसों मानों ।।३।।

भाविकाल के आदि जिन हैं ''श्री सिद्धार्थ'' **कहानें ।**
अन्तिम जिन ''श्री अग्निदत्त जी'' **श्री जिनदेव बखानें ।।**

वर्तमान में ''बालचन्द्र जी'' ''वीरसेन'' **तक गुण गाऊँ ।**
श्री सम्मेदशिखर जी से मैं मोक्षपुरी पा जाऊँ ॥४॥

पूर्व धातकी विजयमेरु के दक्षिण दिशि सम्बन्धी ।
भरतक्षेत्र के भूत-भविष्यत-वर्तमान अनुबन्धी ॥
''श्री रत्नप्रभ'' **आदिक लेकर** ''त्रिजेतृक'' **तक जानों ।**
ये हैं भूतकाल के जिनवर, श्री चौबीसों मानों ॥५॥

भाविकाल के आदि जिन हैं ''श्री सिद्धार्थ'' **बताये ।**
अन्तिम जिन हैं ''शाश्वतप्रभ जी'' **श्री जिनदेव बताये ॥**
वर्तमान ''श्रीयुगादि'' **लेकर** ''नायिकजिन'' **को ध्याऊँ ।**
श्री सम्मेदशिखर जी से मैं मोक्षपुरी पा जाऊँ ॥६॥

पूर्व धातकी विजय मेरु के उत्तर दिशि में जानों ।
ऐरावत के भूत-भविष्यत-वर्तमान में मानों ॥

''वज्रस्वामी'' से आदि लेकर ''हरिश्चन्द्र'' तक अन्ता ।
ये हैं भूतकाल चौबीसी कही सिरी भगवन्ता ॥७॥

भाविकाल के आदि सुजिनवर ''प्रवरवीर'' कहलाये ।
अन्तिम जिन हैं ''श्री विरोषिक'' श्री गुरु ने बतलाये ॥
वर्तमान के आदि ''अपश्चिम'' अन्त ''विरोचन'' ध्याऊँ ।
श्री सम्मेदशिखर जी से मैं मोक्षपुरी पा जाऊँ ॥८॥

अपर धातकी अचलमेरु के दक्षिण दिशि में मानों ।
भरतक्षेत्र के भूत भविष्यत वर्तमान में मानों ॥
''वृषभनाथ'' से आदि लेकर ''श्री शिवनाथ'' जजे हैं ।
ये हैं भूतकाल के जिनवर श्री सर्वज्ञ कहे हैं ॥९॥

भाविकाल के आदि जिनवर ''रत्नकेश'' कहलाये ।
अन्तिम जिन हैं ''सात्त्विक स्वामी'' जैनागम बतलायें ॥

वर्तमान के ''विश्वचन्द्र जिन'' **अन्त** ''एकार्जित'' **ध्याऊँ ।**
श्री सम्मेदशिखर जी से मैं मोक्षपुरी पा जाऊँ ॥१०॥

अपर धातकी अचल मेरु के उत्तर दिशि में जानों ।
ऐरावत के भूत-भविष्यत-वर्तमान में मानों ॥
''श्री सुमेरु जिन'' **आदि लेकर** ''श्री धर्मेश'' **जिनेन्द्रा ।**
ये हैं भूतकाल के जिनवर, कहते सभी गणीन्द्रा ॥११॥

भाविकाल के आदि जिन हैं ''श्री रवीन्दु जी'' **गाये ।**
अन्तिम जिन हैं ''श्री वक्षेश जी'' **जिनवाणी बतलाये ॥**
वर्तमान के ''साधित'' **जिनवर** ''चित्रहृदय'' **धर ध्याऊँ ।**
श्री सम्मेदशिखर जी से मैं मोक्षपुरी पा जाऊँ ॥१२॥

पुष्करार्द्ध में मन्दरमेरु पूर्व दिशा के जानों ।
भरतक्षेत्र के भूत-भविष्यत-वर्तमान में मानों ॥

''दमन-इन्द्र'' **से आदी लेकर** ''श्री विकाश'' **तक मानों ।**
ये हैं भूतकाल चौबीसी मन में यह सरधानों ॥१३॥

भाविकाल के आदि जिनेश्वर ''श्री बंसतध्वज'' **प्यारे ।**
अन्तिम जिन हैं ''त्रिकर्मा जी'' **तीन लोक के प्यारे ॥**
वर्तमान के ''जगन्नाथ जी'' ''अन्त ध्याय जय'' **ध्याऊँ ।**
श्री सम्मेदशिखर जी से मैं मोक्षपुरी पा पाऊँ ॥१४॥

पुष्करार्द्ध में मन्दर मेरु अपर दिशा के जानों ।
ऐरावत के भूत-भविष्यत-वर्तमान में मानों ॥
''कृतिजिन जी'' **हैं आदि जिनेश्वर** ''बिम्बित'' **अन्त बखानों।**
ये हैं भूतकाल चौबीसी यह मन में सरधानों ॥१५॥

भाविकाल के आदि विभू जी ''श्री यशोधर'' **गाये ।**
अन्तिम जिन हैं ''सुप्रदेश जी'' **सबके मन हर्षाये ॥**

वर्तमान के आदि ''शंकर'' **अन्त** ''ब्रह्मज'' **को ध्याऊँ ।**
श्री सम्मेदशिखर जी से मैं मोक्षपुरी पा जाऊँ ।।१६।।

पुष्करार्द्ध के विद्युत्मेरु दक्षिण दिशि सम्बन्धी ।
भरतक्षेत्र के भूत-भविष्यत-वर्तमान अनुबन्धी ।।
''पद्मचन्द्र'' **से आदि लेकर** ''श्री जितेश'' **तक जानों ।**
ये हैं भूतकाल चौबीसी मन में यह सरधानों ।।१७।।

भाविकाल के आदि जिनेशा जो हैं धर्म ''प्रभावक'' ।
अन्तिम जिन हैं ''श्री भरतेश जी'' **वैरागी गुण धारक ।**
वर्तमान ''सर्वांग स्वामी जी'' **अन्त** ''रतानन्द'' **भाऊँ ।**
श्री सम्मेदशिखर जी से मैं मोक्षपुरी पा जाऊँ ।।१८।।

पुष्करार्द्ध के विद्युत्मेरु पश्चिम दिशि सम्बन्धी ।
ऐरावत के भूत-भविष्यत-वर्तमान अनुबन्धी ।।

''श्री उपशान्त'' **से आदि लेकर** ''श्री पुण्यांग'' **तक जानों ।**
ये है भूतकाल चौबीसी कही जिनेश्वर मानों ॥१९॥

भाविकाल के आदि जिनेश्वर ''श्री अदोषिक'' **देव जी ।**
अन्तिम जिन हैं ''श्री सुरार्ध जी'' **इन्हें कहे परमेश जी ॥**
वर्तमान के ''गांगेयक'' **से अन्त** ''शुभंकर'' **ध्याऊँ ।**
श्री सम्मेदशिखर जी से मैं मोक्षपुरी पा जाऊँ ॥२०॥

पञ्च मेरु के जो विदेह में श्री जिनराज विराजे ।
''श्रीमन्धरजिन'' **आदि जु लेकर** ''अजितवीर्य'' **तक छाजे ॥**
शाश्वत होते यहाँ जिनेश्वर नाम सदा ये रहते हैं ।
इसीलिये तो ''विद्यमान हैं'' **बीस जिनेश्वर कहते हैं ॥२१॥**

कामदेव जिन वर्तमान के इसी क्षेत्र के जानों ।
आदि मदन ''श्री बाहुबली जी'' **अन्तिम** ''जम्बू'' **जानों ॥**

कामदेव चौबीसों जिनके “अमित” **चरण बलि जाऊँ ।**
श्री सम्मेदशिखर जी से मैं मोक्षपुरी पा जाऊँ ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्री पञ्चमेरु सम्बन्धी भरतैरावतक्षेत्रस्थ भूत-भविष्यत-वर्तमान कालीन सप्तशत विंशति तीर्थंकर जिन समूह, विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान विंशति तीर्थंकर जिन समूह, भरतक्षेत्रस्थ वर्तमान चतुर्विंशति कामदेव जिनेभ्यो अनर्घ्यपद-प्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तीस चौबीसी ध्याय, विद्यमान जिन बीस भी ।
कामदेव जिनराय, सफल मनोरथ सब करो ॥

शान्तये शान्तिधारा
पुष्पाञ्जलि क्षिपेत् ।

मंगल आरती

करूँ आरती थाल सजा के तीनकाल जिनराज की ।
तीस चौबीसी विद्यमान जिन कामदेव जिनराज की ।। ठेक ।।
सिद्धक्षेत्र सम्मेद शिखर जी है भूमि निर्वाण की ।
वर्तमान के बीस जिनेश्वर पहुँचे शिवपुर थान जी ।।१।।
पर्वत सुन्दर अति ही प्यारा हरा-भरा है वृक्षों से
कल-कल करते झरने बहते पशु-पक्षी के कलरव से ।।
सुर-नर-किन्नर क्रीड़ा करते और करें गुणगान जी ।
इस पर्वत के कण-कण में है पावन शक्ति महान जी ।।२।।
करूँ आरती थाल सजा के.........
सिद्धक्षेत्र के पाद मूल में बसा मधुवन ग्राम जी ।
बनीं यहाँ पर सुन्दर रचना तीस चौबीसी मान जी ।।

अष्ट प्रातिहार्यों से शोभित खड्गासन भगवान जी
करते देव आरती-पूजन मनुज करें गुणगान जी ॥३॥
करूँ आरती थाल सजा के.........

विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर मध्य शिखर में शोभते ।
कमलासन में कमलासन हैं सबके मन को मोहते ॥
सुन्दर तरु अशोक से शोभित हैं जिनका सम्मान जी ।
चारों दिक् में जिनकी कीरत फैली गंध समान जी ॥४॥
करूँ आरती थाल सजा के.........

कामदेव जी चौबीसों की है महिमा अति ही न्यारी ।
करो आरती सब मिल करके करो मुक्ति की तैयारी ॥
विमलसिन्धु जी याद करो संग भरतसिन्धु गुणखान जी ।
आरति करके मिल जायेगा "अमित" धर्म का ज्ञान जी ॥५॥
करूँ आरती थाल सजा के.........

२४ तीर्थङ्करों के गणधरों की कूट (१)

चौबीसों जिनराज के, गण नायक हैं जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ।।

ॐ ह्रीँ श्री ऋषभसेन आदि १४५२ गणधर देव ग्राम के उद्यान आदि भिन्न-२ स्थानों से निर्वाण पधारे हैं, तिनके चरणारणिन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।१।।

ज्ञानधर कूट (२)

कुन्थनाथ जिनराज का, कूट ज्ञानधर जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ।।

ॐ ह्रीँ श्री कुन्थनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; ९६ कोड़ा-कोड़ी, ९६ करोड़, ३२ लाख, ९६ हजार, ७४२; इस कूट से सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।२।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है।

मित्रधर कूट (३)

नमीनाथ जिनराज का, कूट मित्र धर जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ॥

ॐ ह्रीँ श्री नमीनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; ९ कोड़ा-कोड़ी, १ अरब, ४५ लाख, ७ हजार, ९४२; इस कूट से सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।३।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है।

नाटक कूट (४)

अरहनाथ जिनराज का, नाटक कूट हि जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ॥

ॐ ह्रीँ श्री अरहनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; ९ करोड़, ९९ लाख, ९९ हजार, ९९९ (यानि १ कम १ अरब मुनि); इस कूट से सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा

मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।४।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से ६ करोड़ उपवास का फल होता है।

संवल कूट (५)

मल्लिनाथ जिनराज का, संवल कूट हि जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ।।

ॐ ह्रीँ श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; ९६ करोड़ इस कूट से सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।५।।

इस टोंक को भाव सहित वन्दना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है।

संकुल कूट (६)

श्रेयनाथ जिनराज का, संकुल कूट हि जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ।।

ॐ ह्रीँ श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; ९६ कोड़ा-कोड़ी, ९६ करोड़, ९६ लाख, ९ हजार, ५४२; इस टोंक से सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।६।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है।

सुप्रभ कूट (७)

पुष्पदन्त जिनराज का, सुप्रभ कूट हि जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ।।

ॐ ह्रीँ श्री पुष्पदन्त जिनेन्द्रादि मुनि; १ कोड़ा-कोड़ी, ९९ लाख, ७ हजार, ७८०; इस कूट से सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।७।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है।

मोहन कूट (८)

पद्मप्रभु जिनराज का, मोहन कूट हि जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ॥

ॐ ह्रीँ श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्रादि मुनि; ९९ करोड़, ८७ लाख, ४३ हजार, ७५७; इस कूट से सिद्ध भए, तिनके चरणाविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।८।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से एक करोड़ उपवास का फल होता है।

निरजर कूट (९)

मुनिसुव्रत जिनराज का, निरजर कूट हि जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ॥

ॐ ह्रीँ श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; ९९ कोड़ा-कोड़ी, ९९ करोड़, ९९ लाख ९९९; इस टोंक से सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।९।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है।

ललित कूट (१०)

चन्द्रप्रभु जिनराज का, ललित कूट है जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ॥

ॐ ह्रीँ श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्रादि मुनि ९८४ अरब, २ करोड़, ८० लाख, ४ हजार ५९५; इस कूट से सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।१०।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से ९६ लाख उपवास का फल होता है।

आदिनाथ भगवान की टोंक (११)

ऋषभदेव जिन सिध भए, गिरि कैलाश हि जोय ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखर नमूँ पद दोय ॥

ॐ ह्रीँ श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्रादि; १० हजार; कैलाश पर्वत से मोक्ष गए,

तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।११।।

विद्युतवर कूट (१२)

श्री शीतल जिनराज का, कूट विद्युत हि जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ।।

ॐ ह्रीँ श्री शीतलनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; १८ कोड़ा-कोड़ी, ४२ करोड़, ३२ लाख, ४२ हजार, ९०५; इस कूट से सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।१२।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है।

स्वयंप्रभु कूट (१३)

श्री अनन्त जिनराज का, कूट स्वयम्भू जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ।।

ॐ ह्रीँ श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; १६ कोड़ा-कोड़ी, ७० करोड़, ७० लाख, ७० हजार, ७००; इस कूट से सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।१३।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है।

धवल कूट (१४)

श्री सम्भव जिनराज का, धवल कूट है जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ।।

ॐ ह्रीँ श्री सम्भवनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; ९ कोड़ा-कोड़ी, २ लाख, ४२ हजार ५००; इस कूट से मोख गए, तिनके चरणाविन्द को मेरा बन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।१४।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से ४२ लाख उपवास का फल होता है।

वासुपूज्य भगवान की टोंक (१५)

वासुपूज्य जिन सिध भए, चम्पापुर से जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ॥

ॐ ह्रीँ श्री वासुपूज्य जिनेन्द्रादि चम्पापुर मन्दारगिरि से एक हजार; सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५॥

आनन्द कूट (१६)

अभिनन्दन जिनराज का, आनँद कूट हि जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ॥

ॐ ह्रीँ श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्रादि मुनि; ७२ कोड़ा-कोड़ी, ७० करोड़, ३६ लाख, ४२ हजार, ७००; इस कूट से मोक्ष गए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१६॥

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से १ लाख उपवास का फल होता है।

सुदत्तवर कूट (१७)

धर्मनाथ जिनराज का, कूट सुदत्त हि जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; २९ कोड़ा-कोड़ी, १९ करोड़, ९ लाख, ९ हजार, ७९५; इस कूट से सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७॥

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है।

अविचल कूट (१८)

सुमतिनाथ जिनराज का, अविचल कूट हि जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; १ कोड़ा-कोड़ी, ८४ करोड़, ७२ लाख, ८१ हजार, ७८१; इस कूट से सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय

से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।१८।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से ९ करोड़ ३२ लाख उपवास का फल होता है।

कुन्दप्रभ कूट (शान्तिनाथ कूट) (१९)

शान्तिनाथ जिनराज का, कूट कुन्दप्रभ जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ।।

ॐ ह्रीँ श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; ९ कोड़ा-कोड़ी, ९ लाख, ९ हजार, ९९९; इस कूट से मोक्ष गए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।१९।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है।

महावीर भगवान की टोंक (२०)

महावीर जिन सिध भए, पावापुर से जोय ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखर नमूँ पद दोय ।।

ॐ ह्रीँ श्री महावीर स्वामी पावापुर के पद्म सरोवर स्थान से २६; मुनि मोक्ष पधारे, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।२०।।

प्रभास कूट (२१)

श्री सुपार्श्व जिनराज का, कूट प्रभास हि जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ।।

ॐ ह्रीँ श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; ४९ कोड़ा-कोड़ी, ८४ करोड़, ७२ लाख, ७ हजार, ७४२; इस टोंक से सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।२१।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से ३२ करोड़ उपवास का फल होता है।

सुवीर कूट (संकुल कूट) (२२)

विमलनाथ जिनराज का, कूट सुवीर हि जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ॥

ॐ ह्रीँ श्री विमलनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; ७० कोड़ा-कोड़ी, ६० लाख, ६ हजार, ७४२; इस कूट से शिवपुर पधारे, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामिति स्वाहा ।।२२।।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से एक करोड़ उपवास का फल होता है।

सिद्धवर कूट (२३)

अजितनाथ जिनराज का, कूट सिद्धवर हि जेह ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, शिखरसमेद यजेह ॥

ॐ ह्रीँ श्री अजितनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; एक अरब, ८० करोड़, ५४ लाख; इस

कूट से सिद्ध भए, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से ३२ करोड़ उपवास का फल होता है।

नेमिनाथ भगवान की टोंक (२४)

नेमिनाथ जिन सिध भए, सिद्ध क्षेत्र गिरिनार ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, भवदधि पार उतार ॥

ॐ ह्रीँ श्री नेमिनाथ जिनेन्द्रादि-शम्भू प्रद्युम्न अनिरुद्ध इत्यादि ७२ करोड़ सात सौ; गिरिनार पर्वत से मोक्ष भए सिद्धक्षेत्रेभ्यो तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।२४।।

स्वर्णभद्र कूट (२५)

पार्श्वनाथ जिनराज का, स्वर्ण भद्र है कूट ।
मन-वच-तन कर पूजहूँ, जाउँ करम से छूट ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि मुनि; ८२ करोड़, ८४ लाख, ४५ हजार, ७४२; इस परमपुनीत कूट से मोक्ष पधारे हैं, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।२५।।

इक बार इस कूट को शुद्ध भाव से ध्यान व दर्शन करने से पशु गति से छुटकारा हो जाता है और १६ करोड़ उपवास का फल एक बार वन्दना करने से होता है।

प्रज्ञाश्रमण मुनि

श्री कामदेव बाहुबली जिन पूजा

स्थापना

आदिनाथ के द्वितीय पुत्र तुम, कामदेव कहलाते हो।
तन के सुन्दर मात सुनन्दा, सबके मन को भाते हो॥
तप बल में तुम सबसे बढ़कर, एक वर्ष तक खड़े रहे।
इसीलिये प्रभो बाहुबली तव, पूजा हेतु पुकार रहे॥

ॐ ह्रीँ श्री कामदेव बाहुबली जिनेन्द्र अत्र अवतर-अवतर इति आह्वाननं।
ॐ ह्रीँ श्री कामदेव बाहुबली जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीँ श्री कामदेव बाहुबली जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

जन-जन के आराध्य बनें प्रभो, आदर्शों के भी आदर्श।
जीवन जल जैसा बतलाया, किया भरत से जल का युद्ध॥

जीत लिया जल से भी जिनको, चक्रवर्ती का मान हरा।
इसीलिये प्रभो ! बाहुबली तव,- चरणों में यह नीर चढ़ा ।।

ॐ ह्रीँ श्री कामदेव बाहुबली जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय दिव्य जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन से भी शीतल जिनकी, काया गन्ध-सुगन्ध भरी।
घेर लिया सर्पों ने आकर, छोड़ वृक्ष चन्द्रन का भी ।।
चरणों में शीतलता मिलती, चरण आपके छूने से ।
भव-आतप से मुक्ति मिलती, चन्दन तुम्हें चढ़ाने से ।।

ॐ ह्रीँ श्री कामदेव बाहुबली जिनेन्द्राय भवाताप विनाशनाय दिव्य चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अजर-अमर पद पाने वाले, छोड़ा नश्वर सब संसार ।
समझ लिया तुमने इस जग में, धन-वैभव का झूठा प्यार ।।

अक्षय पद तो मुक्ति पद है, ऐसा सोचा मन में धार ।
अक्षत लेकर तुम्हें चढ़ाऊँ पा जाऊँ मुक्ति पथ द्वार ।।

ॐ ह्रीँ श्री कामदेव बाहुबली जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्ताये दिव्य अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

काम विकार सताते निशदिन, मन में आकुलता आती ।
जग की सुन्दरता को लखकर, चञ्चल इन्द्रिय हो जाती ।।
कामदेव जिन बाहुबली जी, तुमसे जग में सुन्दर कौन ? ।
कामदेव भी शर्माता है, सन्मुख आ हो जाता मौन ।।

ॐ ह्रीँ श्री कामदेव बाहुबली जिनेन्द्रय कामबाण विध्वंसनाय दिव्य पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

व्यञ्जन जैसी मीठी वाणी, जग को बस में कर लेती ।
लड्डू घेवर फैनी बर्फी,-का रस रसना है पीती ।।

मधुर रसों से शोभित प्रभो तन, मधुकर गुंजन करते हैं।
लिपटी तन माधवी लता, हम व्यंजन से पूजन करते हैं ।।

ॐ ह्रीँ श्री कामदेव बाहुबली जिनेन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय दिव्य नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्यज्ञान को प्राप्त किया प्रभो ! भरत भाई के आने से।
हार गये हम तुमसे अब भी,-आये इसी बहाने से ।।
तप का तुम आदर्श बनाया, उसको मैं नहीं तोडूँगा।
तप धरते ही निमिष मात्र में, केवल ज्योति पा लूँगा ।।

ॐ ह्रीँ श्री कामदेव बाहुबली जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दिव्य दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

खड़े धूप में पर्वत ऊपर, तन पर धूप नाचती है।
पड़े धूप कितनी ही तन पर, पर छाया नहीं पड़ती है ।।

सर्दी-वर्षा सहे परीषह मन में चाह नहीं कुछ भी ।
अष्ट कर्म का नाश करूँ यह-धूप चढ़ा करके मैं भी ।।
ॐ ह्रीँ श्री कामदेव बाहुबली जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय दिव्य धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों कर फल पाते-पाते चारों गति में घूमे हैं ।
कामदेव-सा तन भी पाया, फिर भी अभी अधूरे हैं ।।
फल से फल मिलता है सबको, ऐसा सभी बताते हैं ।
मिले मोक्ष फल हमको भी प्रभो ! श्री फल तुम्हें चढ़ाते हैं ।।
ॐ ह्रीँ श्री कामदेव बाहुबली जिनेन्द्राय मोक्ष फल प्राप्तये दिव्य फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल जैसा जीवन बतलाया, चन्दन-सी दी शीतल छाया।
अक्षत-सा अक्षय पद दाता, पुष्प सुगन्धी-सा मन भाया।।
व्यंजन-सा मीठा रस पाया, दीपक-सा हो ज्ञान उजाला।
धूप जले ज्यों कर्म जलाता, फल है पल में मुक्ति प्रदाता।।

इन सबको मिल अर्घ्य बनाया, पद अनर्घ्य को पाने आया।

'अमितसिन्धु' ने ध्यान लगाया, बाहुबली को अर्घ्य चढ़ाया।।

ॐ ह्रीँ श्री कामदेव बाहुबली जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(सोरठा)

कामदेव तन रूप, बाहुबली भगवान का।

छोड़ा जग का काम, काम रहा न नाम का।।

पिता ऋषभ जिन मात सुनन्दा, कामदेव आदि जिनराज।

भ्रात भरत-सा बहिन सुन्दरी, जन्म अयोध्या धारा सार।।

बाहुबली है नाम आपका, काम आपका बाहुबल।

इसीलिये तो हार गया था, भरत चक्रवर्ती का बल।।

सवा पाँच-सौ धनुष ऊँचाई, तन का मान बताया है ।
हरित वर्ण काया का रंग है, ऐसा आगम गाया है ।।
नील कमल दल सम नेत्रों की, आभा सदा चमकती है ।
मुख मण्डल में चन्दा जैसी, शोभा सदा बरसती है ।।
पुष्प सुगन्धी चम्पक जैसी, नम्र नासिका में बहती ।
गोल कपोल युग्म चमके ज्यौं, फटिक मणि कान्ति कहती ।।
कर्ण छू गये कन्धों को भी, लगते पर्ण लटकते-से ।
लटक रहे दोनों बाहु तव,-लगते हस्ति सुण्ड जैसे ।।
दिव्य शंख-सा शोभित है वह, कण्ठ लगे सुन्दर प्यारा ।
वक्षस्थल से टपक रहा रस,-वीर बहादुर के सारा ।।
खड़े तपस्वी बनकर भू पर, रहा नहीं कोई भी राग ।
इसीलिये तो चरणों में आ, खेल रहे हैं बहुतर नाग ।।

लिपटी बेल लतायें तन पर, तनिक नहीं है उनका ख्याल ।
ध्यान खड्ग को लेकर तुमने, काट दिया कर्मों का जाल ।।
इस युग के आदर्श तपस्वी, सबके मन को भाते हैं ।
दक्षिण से उत्तर तक आकर, मूर्त रूप में पाते हैं ।।
नगर-नगर अरु गाँव-गाँव में, भक्तजनों ने ध्याया है ।
इसीलिये प्रभो ! आप रूप को, जिन-आलय में बिठाया है ।।
हों नगर-नगर में बाहुबली, सारी धरती धर्म स्थल हो ।
है 'अमित' कामना अमर रहे, यह नारा नभ में गुञ्जित हो ।।

दोहा

दक्षिण दिश में बिन्ध्य नग, बाहुबली हैं सिद्ध ।
श्रवणबेलगोला कहें, जग में नाम प्रसिद्ध ।।

प्रतिमा अती मनोज्ञ है, मनहर अति अभिराम ।
दर्शन पूजन जो करें, पावें अविचल ठाम ॥

इत्यादि आशीर्वाद, दिव्य पुष्पाञ्जलि क्षिपेत् ॥

प्रज्ञाश्रमण मुनि

नोट :- इस पूजन में इस दोहे की जगह पर अपने गाँव-शहर के बाहुबली का नाम जोड़ सकते हैं।

परमागम स्तुति

शारदे ! शरद-सी शीतल, शुभ वाणी दे दो मुझे,
आपके द्वारे हम, भिक्षा लेने आये हैं ।
ज्ञान का प्रकाश करो, मोहतम नाश करो,
कण्ठ में विराजो मेरे, दीक्षा लेनें आये हैं ।
आपकी चतुर्भुज, चार अनुयोग धरें,
ज्ञान हंस-रूप भेद-, विज्ञान धारें हैं ।
ऐसी जिनवाणी मेरी-, आत्मा सुधार करे,
जिनके ''अमित'' बार, चरण पखारें हैं ॥१॥

माता जिनवाणी तेरी, - स्तुति है बार-बार,
तार - तार हुई मेरी, चुँदरी सम्हार दे ।
आगम के शब्द-शब्द-, में हे ! मात दर्श तेरा,
वही दर्श आज निज-, पूत पे निशार दे !
यूँ तो मेरा जीवन ही, वाहन तुम्हारा मात !
प्यार दे ! निहार दे !, दुलार ! पुचकार दे !
हंसवाहिनी मैं तेरी-, गोद में पड़ा हुआ हूँ,
भाव को सुबोध दे !, निखार दे ! माँ शारदे ! ॥२॥

शारदे नमस्कार-, करता हूँ बार - बार,
दीजिए समयसार, साथ में नियमसार !
ज्ञान का रयणसार, दे दो प्रवचनसार,
आत्मा का हो सुधार, करो मन में उजार ।

परम पदारथ सार, दे दो पञ्चास्तिकाय,
पाऊँ मैं भी बोध ऐसा, रक्षा करूँ षट्निकाय ।
ज्ञान निधि ऐसी पाऊँ, मन होवे निर्विकार,
''अमित'' नमस्कार -, करता हूँ बार-बार ।।३।।

वागीश्वरि माता है तू, वचन विधाता है तू,
वचनों का वरदान, एक बार दीजिए ।
बढ़े तो विराग ऐसा, विषयों की वासना से,
बुद्धि से विकारों का, शमन कर दीजिए ।
बाँह मेरी थाम ले, बचा ले मुझे डूबने से,
विकथा के वन से, निकार मुझे लीजिए ।
वचन अथाह रूप, गये हैं जो टूट-फूट,
''अमित'' वचन का, सुधार कर दीजिए ।।४।।

कहाँ-कहाँ बस गई, वर्ण चितेरी मात !
सुन्दर सलौने रूप, रस अरु गन्ध में ।
दोहा कहो चौपाई, काव्य कविता कहो,
गीत गान शायरी, गाथा अरु छन्द में ।
नानी की कहानी बैठी, नाना के भजन बैठी,
दादी की पहेली बैठी, कवियों के कण्ठ में ।
नाटक के नव रस, छोड़े नहीं तूने कभी,
आनके विराजो मेरे, "अमित" के मन में ॥५॥

प्रज्ञाश्रमण मुनि

वीतराग भाव तेरा, वीतराग वाणी तेरी,
वीतराग गाँव तेरा, वीतराग देश है ।
वीतराग जननी है, भव - वन तरणी तू,
वीतराग धर्म तेरा, वीतराग वेश है ।

वीतराग कुटिया, भवन तेरा वीतराग,
वीतराग महल, मकान वीतराग है ।
ऐसी वीतरागी माता, चरणों में नाऊँ माथा,
वीतरागी बन जाऊँ, ''अमित'' विराग है ।।६।।

भारती है नाम तेरा, तारती तू भव से फेरा,
आरती उतारूँ माता, सदा गुण गाऊँ मैं ।
भार को उतारो मेरे, कर्म चितारो मेरे,
पार उतारो मुझे, पास तेरे आऊँ मैं ।
भा गई तू भावों में, छा गई विचारों में तू,
आ रही है याद मुझे, अपने ख्यालों में,
ऐसा मुझे दे दो दान, करूँ अपना कल्याण,
जय हो ''अमित'' रूप, सबके ही नारों में ।।७।।

स्वप्न दिखाये बहु, तूने मात नींद आके,
साक्षात् आके अब, दर्श दे दीजिए ।
गिरे हैं जो भाव, पाप पङ्क में सने हुए हैं,
ऐसे निन्द्य भावों से, उत्कर्ष कर दीजिए ।
हार के जो बैठ गए, कर्मों की मार से जो,
जीत की खुशी का अब, हर्ष भर दीजिए ।
तेरे कर सर पै हों, मेरे झुके सर पै माँ !
मेरे मित भाव को "अमित" कर दीजिए ॥८॥

वीतराग नाथ तेरा, नहि तुझे राग करे,
इसलिए मात तू, कुमारी कहलाती है ।
चार गति दुःख से, सदा ही तू निवार करे,
भव्य जीव बोध के, कुमरण बचाती है ।

सेवा करो ज्ञानियों की, अज्ञजन बोध पाते,
ऐसा भाव तू तो मात, सदा सिखलाती है ।
मेरा भी तू कुमरण, मात! बचा दे जग में,
''अमित'' के बन्ध इक-, क्षण में छुड़ाती है ॥९॥

भारती सरस्वती है, शारदा है नाम तेरा,
विदुषी है माता, हंसगामिनी कहाती है ।
वागीश्वरि जगमाता, ब्रह्माणी है वरदा तू,
ब्राह्मणी है वाणी है तू, भाषा कहलाती है ।
ब्रह्मचारिणी है माता, बाल कुमारी है तू,
गौ है श्रुत देवी है तू, विद्या कहलाती है ।
इतने हैं नाम तेरे, काम तेरा एक ही है,
आनके ''अमित'' की, बुद्धि बस जाती है ॥१०॥

ज्ञानियों के ज्ञान में तू, ध्यानियों के ध्यान में तू,
सङ्गीतों की तान में तू, आन के विराजी है ।
सुगतों की बुद्धि में तू, शिव जी की ऋद्धि में तू,
ब्रह्मा जी के ब्रह्म में तू, ज्ञान हो विराजी है ।
विष्णु की शान में तू, राम हनुमान में तू,
भिन्न-भिन्न मत के तू, मति में विराजी है ।
वैशेषिक सांख्य, चार्वाक मत जैनियों के,
"अमित" मतिमान, बन के विराजी है ॥११॥

उर नहि सुर नहि, वीणा नहि वाणी नहि,
राग नहि साज नहि, इतना गरीब हूँ ।
वर्ण नहि शब्द नहि, वाक्य नहि शास्त्र नहि,
पण्डित विद्वान ज्ञानी, कवि न सुरूप हूँ ।

सभा जैसा भेष नहि, मञ्च जैसा मान नहि,
आन-वान-शान के मैं, कहाँ से करीब हूँ ।
मैं तो तेरी भक्ति माँ, करता हूँ रात-दिन,
इसलिए माता मैं तो, ''अमित'' नसीब हूँ ॥१२॥

मन्त्र णमोकार इक, सिद्ध मन्त्र विश्व में है,
जिसने है विश्व की, - ऊँचाईयों को चूमा है ।
मन्त्र है विख्यात ऐसा, गुण-रूपी रत्न खानि,
जिसने है सिन्धु की, गहराईयों को ढूँढ़ा है ।
चार घाति कर्म नाश, - भये अरिहन्त प्रभो !
आठ कर्म नाश सिद्ध, - भये गये सिद्ध भूमि ।
शासन सु आचारज, पाठन सुपाठक भये,
साधु नमें साधना से, ''अमित'' निजानुभूति ॥१३॥

मंगल महान मन्त्र, ऋद्धि-सिद्धि ज्ञान-दाता,
चार रूप मंगल में, बनके समाता है ।
अरिहन्त सिद्ध साधु रूप, केवली की वाणी रूप,
भव-भव में मंगल हो के, सुख का प्रदाता है ।
उनका ही उत्तम रूप, चार भेद का स्वरूप,
निर्दोष पद का जो, मार्ग बतलाता है ।
इनकी ही शरणा से, कटते हैं पाप फन्द,
भगते "अमित" भय, मोक्ष का प्रदाता है ॥१४॥

भारती है भानु के, समान दिव्य - तेज दाता,
अन्धकार तुझको, पसन्द नहीं आता है ।
पढ़ना औ लिखना भी, होता है प्रकाश में ही,
चिन्तन से चेतना का, द्वार खुल जाता है ।

न्याय-नीति आगम-, अध्यात्म का प्रकाश भरा,
ऐसा कोई शास्त्र न जो, तुझको न आता है।
ऐसे दिव्य - ज्ञान के, प्रकाश का प्रकाश दे माँ !
तू ही माता ''अमित'' की, भाग्य विधाता है ॥१५॥

सर-सर दौड़ती है, जल के समान माता,
छोटे-बड़े गढ्ढों को, भरे ही चली जाती है ।
सरवर-नदी-नाले, सूख जाते मोका पा-के,
हर पल बहती माता, दौड़ी चली आती है ।
बाँटती-उलीचती, खर्चा करे दिन-रात,
गणधर की बुद्धि भी तो, पार नहीं पाती है ।
ऐसा है अथाह रूप, सागर के समान रूप,
सरवर ''अमित'' रूप, सरस्वती कहाती है ॥१६॥

शारदे माँ! शर दे, विवेक और बुद्धि दे दो,
बढ़े-बढ़े लक्ष्य को भी, प्राप्त कर जाऊँ मैं ।
कुवादी के शर को मैं, शूरवीर बन के माता,
कविता के क्षेत्र में, परास्त कर डालूँ मैं ।
लक्ष्य मेरा बना रहे, आगम की रक्षा हेतु,
अनेकान्त धनुष को, हाथों में सम्भालूँ मैं ।
नय-नय तीर ले के, नये-नये लक्ष्य ले के,
"अमित" गति से सीधे, तीर चला दूँ मैं ॥१७॥

विदुषि है माता तू, विद्वानों की जनम - दाता,
जनम - जनम माता, साथ दे दीजिये ।
मिल जाये ज्ञान ऐसा, खर्चे न पाई - पैसा,
ऐसे ज्ञान - धन का, भण्डार भर दीजिये ।

राजा नहि छीने जिसे, चोर नहि लूटें जिसे,
रत्नों के भण्डार से न, कीमत चुकाते हैं ।
ऐसे ज्ञान-धन को मैं, बाँटू दिन-रात माता,
''अमित'' से सिन्धु तुम्हें, शीश झुकाते हैं ।।१८।।

हंस-वाहिनी तू बन के, जल में चली निकल के,
मोतियों के दानें चुन के, हंस मन भाया है ।
नीर-क्षीर का विवेक, राग-द्वेष का न लेश,
ऐसा रूप माता तूने, प्रकृति से पाया है ।
हाथों में तू लेखनी का, रूप धरती है माता,
चलने में हंस-गति, रूप दर्शाया है ।
पाप पंक का न लेश, पंकज-सा पुञ्ज तेज,
''अमित'' स्वरूप माता, ज्ञान का बनाया है ।।१९।।

वागीश्वरि-वाणी में तू, वचनों की रानी है तू,
वीणा के उन तारों में तू, सप्त स्वर दाता है ।
तबले की ताल में तू, ढ़ोलक की खाल में तू,
झुनझुन की झंकार में तू, स्वर भी सुहाता है ।
मंजीरे की चाल में तू, हाथों की करताल में तू,
बाँसुरी के नाद में तू, श्वास-सुर दाता है ।
वायु की बयार में तू, वर्षा की फुहार में तू,
झरनें के निनाद में तू,''अमित'' रूप आता है ॥२०॥

जगमाता नाम तेरा, जिसने है मन से टेरा,
उसकी पुकार को माँ, शीघ्र सुन लेती है ।
बच्चा हो या बूढ़ा हो, यौवन से भरा हुआ हो,
सबकी पुकार में तू, उत्तर दे देती है ।

जैसे जिद्दी बालक को, माता देती मन-मार,
वैसे भद्र बालक को, मना-मना देती है ।
ऐसा ही है तेरा रूप, प्राणी मात्र हितकार,
"अमित" की माता बनके, माँग भर देती है ॥२१॥

ब्रह्माणी है ब्रह्मरूप, ब्रह्मा की भुजा स्वरूप,
चार भुजाधारी होके, लोक को बताया है ।
चार अनुयोग ज्ञान, देने वाली ब्रह्माणी तू,
चार गतिरूप में तू, रूप फैलाया है ।
नरकों में सम्यक्त्व रूप, पशुओं में व्रत रूप,
मनुजों में मोक्षरूप, देव मन भाया है ।
प्राणीमात्र करुणा पात्र, तेरे माता जग में है,
"अमित" का ब्रह्म माता, उसी में समाया है ॥२२॥

वरदा है सबकी माँ तू!, वरदान देती है तू,
वीरों में तू वीरज की, शक्ति भी बढ़ाती है ।
सबको है वर देती, मन नहि भेद लाती,
जिनने जैसा सोचा, वैसा भाव दर्शाती है ।
कन्या को है वर देती, वर को वधू है देती,
जोड़ा जोड़-जोड़ के तू, मेल मिलवाती है ।
देने वाली दाता है तू, लेने वाला पात्र मैं हूँ,
दाता-पात्र "अमित" का, पूरा भर जाती है ॥२३॥

ब्रह्माणी है ब्रह्म में, समायी है तू रूपधारी,
बाह्य में न रूप दिखे, समझ न आया है ।
बहुत बनाये रूप, भीतर में जाके माता,
ब्रह्म-ज्ञानियों ने ही तो, तेरा दर्श पाया है ।

विषय-विकारों में जो, भटक रहे हैं प्राणी,
उनने ही तेरे उस, स्वरूप को लजाया है ।
तू तो माता भोली-भाली, मेरी तो है करनी काली,
ऐसा जानकर भी माता, ''अमित'' निभाया है ॥२४॥

वाणी नाम नाम-माला, बनी है सहारे तेरे,
वर्ण-वर्ण वर्ग-वर्ग, बहुत बनाये हैं ।
वाक्य-वाक्य बुनकर, बन गये पाठ तेरे,
वाणी की ही बात से, विद्वान भी कहाये हैं ।
वाणी है सुरीली तो वो, वीणा का है काम करे,
वाणी है कटीली तो वो, वाण का स्वरूप है ।
वाणी हि रामायण रूप, वाणी हि है महाभारत,
वाणी ''अमित'' अमृत-विष, औषधि-घावरूप है ॥२५॥

भाषा है तू भासमान, दिव्य-तेज ओज वाली,
सबको बताती है तू, उनकी ही भाषा में ।
महाभाषा अठारह जो, जग में लिपि स्वरूप,
लघु भाषा सात-सै हैं, बोल-चाल भाषा में ।
भाषा-भाषा भिन्न-भिन्न, भाव-भाव एक रूप,
जल आव् वाटर पानी, कहते हैं जहान में ।
कितने ही नाम रखो, काम सबका एक होता,
आग-प्यास को बुझाना, "अमित" जहान में ॥२६॥

ब्रह्मचारिणी है माता, ब्रह्म है निवास तेरा,
शुक्लभाव रूप तेरी, साटिका कहाती है ।
शिर-केश होकर भी, राग नहीं तेरा लेश,
विषयों की वासना से, अक्षों को बचाती है ।

मन तेरा रीता है, कषायों के कङ्कणों से,
संयम के शृंगार से तू, देह को सजाती है ।
तप तेरा घर-वर, त्याग तेरा अनुचर,
''अमित'' अकिञ्चन भाव, भर-भर लाती है ॥२७॥

गौ के है समान भद्र, रक्षा करें नय सींग,
पूँछ के समान बाल-, लज्जा रखवाली है ।
चार थन चार वेद, दूध सबका एक-सा है,
रंग में असमान फिर भी, मधु-रस वाली है ।
वात्सल्य आपका, समान है त्रिलोक से ही,
इसीलिए गोवत्स, प्रीत-सी निहारी है ।
गौ-धन को गिनते हैं, जगत के मान में तो,
ज्ञान-धन आपका भी, ''अमित'' चितारी है ॥२८॥

श्रुत-देवी रूप तेरा, कर्णों के है सुनने से,
अङ्ग-बाह्य अङ्ग-प्रविष्ट, दो रूप जाना है ।
अङ्ग-बाह्य अनेक रूप, अङ्ग प्रविष्ठ बारह रूप,
इतने में पूरा श्रुत, भगवान ने बखाना है ।
द्रव्य-श्रुत भाव-श्रुत, दोनों के हैं भाव न्यारे,
द्रव्य-श्रुत अभव्य ग्यारह,- अङ्ग नव पूर्वधारें हैं ।
भाव-श्रुत की महिमा न्यारी, ''तुषमांस भिन्न'' रूप,
मित श्रुत ने भी तो, ''अमित'' जीव तारें हैं ॥२९॥

विद्या है विशाल रूप, दर्पण-सा स्वरूप जिसमें,
शिक्षा अति सूक्ष्मरूप, सूत्रों का सहारा है ।
विद्या का विज्ञान भरा, झलकें जिसमें तीनों काल,
द्रव्य-गुण-पर्यायों का, दिखता किनारा है ।

लोक-अलोक को, देखा है प्रत्यक्ष जिसने,
ऐसी उस विद्या पै, मन मोहित हमारा है ।
बलि-बलि जाऊँ ऐसी, विद्या के स्वरूप को मैं,
दे-दे तू ‘‘अमित’’ को, भव-सिन्धु का किनारा है ॥३०॥

मंगल मन-वीणा

मन की वीणा पै झंकृत स्वरं मंगलं ।
मंगलं, मंगलं, मंगलं, मंगलं.......॥टेक॥

सा - से सारे गमों को गवाँ दे, हे माँ! ।
गम की दुनियाँ से हमको बचा ले, हे माँ! ॥१॥

रे - से रेखा बदल सर-करों की, हे माँ! ।
भाग्य का लेख सुन्दर तू रच दे, हे माँ! ॥२॥

गा - से गाता रहूँ तेरी विरुदावली ।
छन्द - गाथा बना के रचूँ शायरी ।।३।।
मा - से ममता का आँचल मिले मुझको माँ ! ।
जिससे भय-दुख का दामन छुटे मेरी माँ ! ।।४।।
पा - से पाऊँ परम भाव परमात्मा ।
होवे जिस भाव में पुण्य ना पाप ना ।।५।।
धा - से धारण करूँ धर्म दशलक्षणी ।
धार करके बनूँ मैं, हे माँ! सद्गुणी ।।६।।
नि - से निस्सार संसार में न रमूँ ।
पाके निर्वाण पद मैं ''अमित'' सुख चखूँ ।।७।।
सा-रे-गा-मा-पा-धा-नि का स्वर मंगलं ।
मंगलं, मंगलं, मंगलं, मंगलं..........।।८।।

अमित वाणी

ज्ञान के अनुपात को विवेक कहते हैं।

ज्ञान की एकाग्रता को ध्यान कहते हैं।

शक्तिशाली इन्द्र भी पुण्यवानों की सेवा करता है।

अज्ञानियों से लड़ने की अपेक्षा अपने अज्ञान से लड़ें।

भगवान बनने की शुरुआत भोजन शुद्धि से होती है।

भय और आसक्ती से ऊपर उठने का नाम आनन्द है।

किसी की उदारता का दुरुपयोग नहीं करना ही ईमानदारी है।

समय, श्रम, सम्पदा एवं संक्लेश की बचत करना ही एम.बी.ए. है।

जो मूर्ख को चुप करा दे एवं विद्वान् को बुलवा दे, वह बुद्धिमान है।

जो अपने अज्ञान को ज्ञानरूप प्रदर्शित करता है, वही सबसे बड़ा मूर्ख है।

देरी में धैर्यता एवं जल्दवाजी में अपनी शक्ति-प्रतिभा का प्रदर्शन होता है।

हमारा अज्ञान और प्रमाद; किसी की उन्नति में बाधक नहीं बनना चाहिये।

~~~~~~~

पाप करने वाले को पापी कहते हैं, पुण्य कार्य को रोकने वाले को दुष्टी कहते हैं।

~~~~~~~

जिसके बिना न रहा जाये, वह राग है। राग को सामने रखकर कूटना वैराग्य है।

~~~~~~~

पाप और पाप क्रिया को छोड़ना व्रत है।
पुण्य और पुण्य क्रिया को छोड़ना वैराग्य है।

~~~~~~~

जो पाप से संचित किया जाता है, वह परिग्रह है।
जो पुण्य से प्राप्त होती है, वह सम्पदा है।

~~~~~~~

पाप करने में जितना पाप नहीं है,
उससे कई गुना पाप किसी को पुण्य कार्य करने से रोकने में है।
~~~~~~~

अपने शरीर में रहकर, जिन्दा रहना आश्चर्य नहीं है।
अपने शरीर से मरकर दूसरों के शरीर में युगों-युगों तक
जिन्दा रहना आश्चर्य की बात है।

भाष्य लिखने के लिये बुद्धि-वैभव, स्तुति के लिये भक्ति न हो तो भी
कल्पना के उल्लास से काम चल सकता है, परन्तु धर्मान्य समाज का
विरोध सहकर परम्परागत घातक रूढ़ि को बन्द करने के लिये तपस्तेज,
धर्मनिष्ठा और हृदय सिद्धि की जरूरत होती है।
'शक्ति के समझे जाने वाले बहुत से कार्य युक्ति से होते हैं।'

''**काका कालेलकर**''